कीटाणु के खिलाफ कीटाणु

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

मानव बम जानी-मानी चीज़ हैं। पहले तो द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जापानी कामिकाज़े पायलटों ने और हाल में लिट्टे व अल कायदा के मानव बमों ने इनसे हमारा त्रासद परिचय कराया है।

अब वैज्ञानिकों ने एक आत्मघाती *ई. कोली* तैयार किया है। इसकी मदद से *स्यूडोमोनास* नामक रोगजनक कीटाणु से लड़ने में मदद मिलेगी। *स्यूडोमोनास* निमोनिया व अन्य बीमारियां पैदा करता है। इस तरह के आत्मघाती कीटाणु की मदद से दवा-प्रतिरोधी रोगजनक कीटाणुओं का सफाया हमारे संघर्ष का एक और हथियार है।

दरअसल, कीटाणुओं के संक्रमण और हमारे बीच जो लड़ाई है वह दिमाग बनाम जीन्स की लड़ाई है - हमारे दिमाग और कीटाणुओं के जीन्स। हम अपने दिमाग का इस्तेमाल करके कीटाणुओं को परास्त करने के लिए दवाइयों और टीकों का निर्माण करते हैं। दूसरी ओर, कीटाणु इस बात पर निर्भर करते हैं कि वे बड़ी संख्या में संतान पैदा करते हैं और इस प्रक्रिया में कोशिका विभाजन के दौरान उनके जीन्स में गलतियां होने की काफी संभावना रहती है।

यह सही है कि जब दवा का इस्तेमाल किया जाता है, तो अधिकांश कीटाणु मारे जाते हैं। इसी प्रकार से जब टीका लगाया जाता है तो कीटाणु के संक्रमण से बचाव होता है। मगर यह भी सच है कि कीटाणुओं के जीन्स में होने वाले बेतरतीब उत्परिवर्तन (म्यूटेशन्स) उनमें दवा या टीके के खिलाफ प्रतिरोध विकसित करने में मददगार होते हैं। मामला समय का भी है।

हमें कोई नई दवा तैयार करने में बरसों लगते हैं। मगर कीटाणु को संख्या वृद्धि करने में चंद घंटे ही लगते हैं। उनकी संख्या वृद्धि की रफ्तार इतनी तेज़ होती है कि हमारा ध्यान जाने से पहले ही उत्परिवर्तनों के चलते कोई न कोई 'अजनबी' दवा-प्रतिरोधी कीटाणु पैदा हो चुका होता है। ऐसा 'अजनबी' कीटाणु जल्दी ही करोड़ों कीटाणु पैदा कर देता है, जो दवा-प्रतिरोधी होते हैं। ऐसा कीटाणु हमारी सारी चतुराई को परास्त कर देता है। हम एक बार फिर प्रयोगशाला में पहुंच जाते हैं ताकि कोई नई दवा तैयार कर सकें।

मगर सारे कीटाणु बुरे नहीं होते। हमारी चमड़ी, आंतों व अन्यत्र कई कीटाणु पलते हैं जो हमें स्वस्थ रहने में मदद करते हैं। ये जीयो और जीने दो के सहजीवी सिद्धांत का पालन करते हुए हमारे लिए कई सारे ज़रूरी पदार्थ उपलब्ध कराते हैं। और हम अपनी ओर से इन्हें शरीर में रहने का ग्रीन कार्ड दे देते हैं। हमारे शरीर में रहने वाले ऐसे सारे कीटाणुओं के पूरे कुनबे को *माइक्रोबायोम* कहते हैं।

दरअसल, समस्या तब होती है जब कोई विदेशी या नाजायज़ कीटाणु हमारे शरीर में प्रवेश करता है। ऐसे ही एक कीटाणु का नाम *स्यूडोमोनास ऐरूजिनोसा* है।*स्यूडोमोनास* का अर्थ होता है फर्ज़ी इकाई (या फर्ज़ी मनुष्य)। नाम के दूसरे हिस्से *ऐरूजिनोसा* का मतलब है जंग लगे तांबे का रंग (वैसे कुछ लोग मानते हैं कि रूजिनोसा का अर्थ झुर्रीदार होता है)। यह कीटाणु हमारे शरीर में पलने लगता है और कुछ विषैले अणु बनाता है जो हमें (और हमारे *माइक्रोबायोम* को) नुकसान पहुंचाते हैं। इसकी वजह से हमें निमोनिया व अन्य बीमारियां हो जाती हैं।

तो समस्या यह है कि कैसे इस घुसपैठिये को मारा जाए या शरीर से बाहर किया जाए और अपनी व अपने *माइक्रोबायोम* की रक्षा की जाए। हम जो भी दवा या टीका बनाएं वह *स्यूडोमोनास ऐरूजिनोसा* के ही खिलाफ कारगर होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, दवा एकदम विशिष्ट होनी चाहिए। इसी मोड़ पर दिमाग और जीन्स की लड़ाई परवान चढ़ती है। फिलहाल हम जिन दवाइयों का उपयोग कर रहे हैं, वे बहुत कामयाब नहीं हैं क्योंकि *स्यूडोमोनास* ने दवा-प्रतिरोध हासिल कर लिया है।

इस संदर्भ में अमरीकी नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ के डॉ. शंकर अध्या और गंगाजेन बायोटेक्नॉलॉजी, बैंगलूरु के डॉ. जे. रामचंद्रन ने कुछ वर्षों पहले एक नए विचार पर काम शुरू किया था। विचार यह था कि ऐसे वायरसों का

उपयोग किया जाए जो बैक्टीरिया को अपना निशाना बनाते हैं। जिस तरह से वायरस हमें संक्रमित करते हैं, उसी तरह से वायरसों का एक समूह है जो बैक्टीरिया को संक्रमित करके मार डालता है। इन्हें बैक्टीरिया-भक्षी कहते हैं। तरीका यह होगा कि ऐसे बैक्टीरिया-भक्षी को चुना जाए जो विशिष्ट रूप से *स्यूडोमोनास* को अपना शिकार बनाता हो। ऐसे भक्षी को अपने शरीर में प्रविष्ट करवाकर बैक्टीरिया को मारा जा सकेगा।

एक बार फिर, समस्या यह है कि यदि हम वायरस को एक सहायक के रूप में इस्तेमाल करेंगे, तो हो सकता है कि हमारा शरीर इस वायरस के खिलाफ एंटीबॉडीज़ बनाने लगेगा और उसे खत्म कर देगा। तो बात कहीं नहीं पहुंचेगी।

इसी पृष्ठभूमि में सिंगापुर के डॉ. चुए लू पो और डॉ. मैथ्यू वुक चांग के नेतृत्व में जैव-रासायनिक इंजीनियर्स के एक दल ने एक सर्वथा नवीन तरीका विकसित किया है जो *मॉलीक्यूलर सिस्टम्स बायोलॉजी* के 16 अगस्त के अंक में प्रकाशित हुआ है।

इस दल ने यह पता लगाया कि *स्यूडोमोनास ऐरूजिनोसा* के पास कौन-कौन से अस्त्र-शस्त्र हैं। जैसे कई अन्य सूक्ष्मजीवों से प्रतिस्पर्धा करने व उनके बीच जीवित रहने के लिए यह एक बैक्टीरिया-विष बनाता है जिसे पायोसिन कहते हैं। मगर यह ज़रूरी है कि पायोसिन अन्य बैक्टीरिया को मारे, खुद को नहीं। लिहाज़ा, *स्यूडोमोनास* पायोसिन की दो लड़ियां बनाता है - एक अन्य बैक्टीरिया को मारने के लिए तथा दूसरी खुद को सुरक्षित रखने के लिए। यह भी देखा गया कि इसे दुश्मन से लड़ने के लिए न्यूनतम संख्या यानी एक पूरी टुकड़ी की आवश्यकता होती है। इसे संभव बनाने के लिए यह छोटे-छोटे अणु प्रेषित करता है जिनसे अन्य *स्यूडोमोनास* को एक जगह इकट्ठा होने का संकेत मिलता है। इन छोटे-छोटे अणुओं को कोरम-संवेदक नाम दिया गया है यानी ये निर्धारित करते हैं कि एक न्यूनतम संख्या एकत्रित हो गई है या नहीं।

सिंगापुर दल ने उपरोक्त तीनों सुरक्षा रणनीतियों पर एक साथ धावा बोलने का निर्णय किया। इसके लिए उन्होंने बैक्टीरिया *ई. कोली* की एक किस्म ली जो हमारे शरीर में सामंजस्य से रहती आई है। उन्होंने तय किया कि वे इस *ई. कोली* में कुछ परिवर्तन करेंगे। *ई. कोली* चुनने का कारण यह था कि यह निरापद है और हमारे शरीर में ही बसता है। इसके अलावा, यह तेज़ी से संख्या वृद्धि करता है और करोड़ों प्रतिलिपियां तैयार हो जाती हैं; यानी यदि इसे दवाई के तौर पर इस्तेमाल किया जाए, तो खुराक स्वतः बढ़ती रहेगी।

पहला जीन वह है जो एक ऐसा प्रोटीन बनाता है जो जाकर *स्यूडोमोनास ऐरूजिनोसा* के कोरम-संवेदक से जुड़ जाता है। इसी तारतम्य में उन्होंने जिस अगले जीन पर काम किया, वह था प्रोटीन पायोसिन एस-5 का जीन। यह प्रोटीन *स्यूडोमोनास ऐरूजिनोसा* को मार गिराता है मगर स्वयं *ई. कोली* या मनुष्य को हानि नहीं पहुंचाता। और अंत में एक जीन जोड़ा गया जो लायसिस ई-7 नामक प्रोटीन बनाता है। यह प्रोटीन दरअसल स्वयं *ई. कोली* को फोड़कर खोल देता है।

जब इस फेरबदलशुदा *ई. कोली* को वृद्धि करने का मौका मिलता है तो वह तेज़ी से संख्या वृद्धि करता है। साथ ही साथ *ई. कोली* फटते रहते हैं और *स्यूडोमोनास* को नष्ट करने वाला रसायन छोड़ते रहते हैं। यानी इस प्रक्रिया में *ई. कोली* किसी आत्मघाती बैक्टीरिया बम की तरह (कामिकाज़े बमवर्षक के समान) खुद को नष्ट करते रहते हैं और साथ में *स्यूडोमोनास* को भी।

इस तरह से, सिंगापुर के शोधकर्ताओं ने जेनेटिक रूप से परिवर्तित कामिकाज़े बैक्टीरिया तैयार करने का मार्ग प्रशस्त कर दिया है जो घुसपैठिये कीटाणुओं से लड़ेंगे। शोधकर्ताओं कहते हैं कि इस प्रक्रिया का उपयोग *विब्रियो कॉलेरा* (हैज़ा फैलाने वाले बैक्टीरिया) के खिलाफ भी किया जा सकेगा। अब वे यही आज़माने की फिराक में हैं।

इस नए तरीके को संश्लेषण जीव विज्ञान कहते हैं। सिंगापुर समूह इसे इस तरह परिभाषित करता है कि यह जेनेटिक रूप से परिवर्तित जैविक तंत्रों के निर्माण का तरीका है जो ऐसे कार्य कर सकते हैं जो प्रकृति में नहीं पाए जाते। गौरतलब है कि इंजीनियर्स और कार्बनिक रसायन शास्त्री यही करते आए हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***